[2018] 10 एससीआर 503

सीता राम भामा

बनाम

रामवतार भामा

(सिविल अपील संख्या 3171 की 2018) 23 मार्च, 2018

[एके के सीकरी और अशोक भूषण, न्यायमूर्तिगण]

पंजीकरण अधिनियम, 1908- धारा 17 और 49- साक्ष्य में दस्तावेज की स्वीकार्यता- अपीलकर्ता- वादी और प्रतिवादी- प्रतिवादी ने अपने पिता की मृत्यु के बाद अपनी स्व-अर्जित संपत्तियों के संबंध में अपने पिता द्वारा तय किए गए समझौते का ज्ञापन दर्ज किया- वादी ने दावा किया कि प्रतिवादी ने घर का ताला तोड़ दिया और घर पर कब्जा कर लिया- वादी द्वारा प्रतिवादी के खिलाफ कब्जे और स्थायी निषेधाज्ञा के लिए सिविल मुकदमा दायर किया गया था। वादी ने पारिवारिक समझौते के लिए समझौता ज्ञापन भी दायर किया- प्रतिवादी ने 13 वें, आर.3 के तहत आवेदन दायर किया जिसमें दावा किया गया कि समझौते के ज्ञापन पर ठीक से मुहर नहीं लगाई जा रही है और एक पंजीकृत दस्तावेज नहीं होना साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं है - ट्रायल कोर्ट ने आवेदन को स्वीकार कर लिया- उच्च न्यायालय द्वारा खारिज किए गए ट्रायल कोर्ट के आदेश के खिलाफ दायर रिट याचिका- अपील पर, वादी के पिता की मृत्यु के बाद, प्रतिवादी और उनकी मां के साथ-साथ बहनें हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के तहत कानूनी उत्तराधिकारी बन गईं, जो संपत्ति को प्रथम श्रेणी के उत्तराधिकारी के रूप में विरासत में मिल- समझौता ज्ञापन ने वादी और प्रतिवादी के बीच पूरी संपत्ति को विभाजित किया, जिसके दस्तावेज पर उनकी मां के साथ-साथ बहनों द्वारा हस्ताक्षर किए जाने का भी दावा किया गया था । संपत्तियों के अन्य उत्तराधिकारियों के अधिकारों का त्याग किया गया था, निपटान ज्ञापन पंजीकरण अधिनियम की धारा 17 के तहत अनिवार्य रूप से पंजीकृत किया गया था- दस्तावेज पर मुहर नहीं लगाई जा सकती थी- ट्रायल कोर्ट दस्तावेज को अस्वीकार्य मानने में सही था- नागरिक प्रक्रिया संहिता, 1908 - या 13, आर.3- हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956.

पंजीकरण अधिनियम, 1908 - धारा 17 - अपंजीकृत दस्तावेज - विभाजन वाद - क्या साक्ष्य में अस्वीकार्य दस्तावेज का उपयोग किसी संपार्श्विक उद्देश्य के लिए किया जा सकता है- माना जाता है: विभाजन के लिए एक मुकदमे में, एक अपंजीकृत दस्तावेज पर सुप्रीम कोर्ट की

503 रिपोर्टों के लिए भरोसा किया जा सकता है।

संपार्श्विक उद्देश्य अर्थात शीर्षक की पृथकता, विभिन्न शेयरों के कब्जे की प्रकृति, लेकिन प्राथमिक उद्देश्य के लिए नहीं यानी संयुक्त संपत्तियों का सीमा ओं द्वारा विभाजन - इसके अलावा, एक बिना मुहर वाला लिखत संपार्श्विक उद्देश्य के लिए भी साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं है, जब तक कि उसे जब्त नहीं किया जाता है- तत्काल मामले में, दस्तावेज संपार्श्विक उद्देश्य के लिए साक्ष्य में स्वीकार्य हो सकता है बशर्ते अपीलकर्ता दस्तावेज को जब्त कर ले और दंड के साथ स्टाम्प ड्यूटी का भुगतान करे।

आंशिक रूप से अपील को स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित: 1. दिनांक 09.09.94 का समझौता ज्ञापन केवल पारिवारिक समझौते का ज्ञापन नहीं था, बल्कि एक पारिवारिक समझौता था। सबसे पहले, 25.10.1992 को, पार्टियों के पिता स्वयं दोनों के मालिक थे, निवास और दुकान उनकी स्व-अर्जित संपत्ति थी। उच्च न्यायालय ने सही कहा है कि उक्त दस्तावेज को वसीयत नहीं कहा जा सकता है, ताकि पिता अपने दो बेटों, वादी और प्रतिवादी के पक्ष में वसीयत बना सके। न तो वादी और न ही प्रतिवादी के पास उस दिन संपत्ति में कोई हिस्सा था जब कहा जाता है कि यह उनके पिता द्वारा विभाजित किया गया था। अपने पिता वादी की मृत्यु के बाद, प्रतिवादी और उनकी मां के साथ-साथ बहनें हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के तहत कानूनी उत्तराधिकारी बन जाती हैं। दिनांक 09.09.1994 के दस्तावेज ने वादी और प्रतिवादी के बीच पूरी संपत्ति को विभाजित किया, जिस दस्तावेज पर उनकी मां के साथ-साथ बहनों द्वारा भी हस्ताक्षर किए जाने का दावा किया गया है। मामले के किसी भी दृष्टिकोण में, संपत्तियों के अन्य उत्तराधिकारियों के अधिकारों का त्याग है, इसलिए, नीचे दी गई अदालतें अपने निष्कर्ष में सही हैं कि त्याग होने के कारण, दिनांक 09.09.1994 का दस्तावेज पंजीकरण अधिनियम की धारा 17 [पैरा 10] [508- डी- जी] के तहत अनिवार्य रूप से पंजीकृत था।

2. दिनांक 09.09.1994 का दस्तावेज अनिवार्य रूप से पंजीकरण योग्य था। दस्तावेज पर मुहर नहीं लगने के कारण इसे साक्ष्य के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता था और दस्तावेज को अस्वीकार्य मानने वाले प्रतिवादी के आवेदन को स्वीकार करने में ट्रायल कोर्ट के आदेश को गलत नहीं ठहराया जा सकता है। [पैरा 12] [510-डी]

3. मामले का केवल एक पहलू है जिस पर विचार करने की आवश्यकता है, अर्थात, क्या दिनांक 09.09.1994 का दस्तावेज़, जो साक्ष्य में अस्वीकार्य था, का उपयोग किसी संपार्श्विक उद्देश्य के लिए किया जा सकता था। विभाजन के मुकदमे में, एक अपंजीकृत सीता राम भामा बनाम रामवतार भामा

दस्तावेज को संपार्श्विक उद्देश्य के लिए भरोसा किया जा सकता है यानी शीर्षक की गंभीरता, विभिन्न शेयरों के कब्जे की प्रकृति, लेकिन प्राथमिक उद्देश्य के लिए नहीं यानी संयुक्त संपत्तियों का विभाजन और सीमा ओं के आधार पर। इसके अलावा, एक बिना मुहर वाला उपकरण संपार्श्विक उद्देश्य के लिए भी साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं है, जब तक कि उसे जब्त नहीं किया जाता है। तत्काल मामले में, दिनांक 09.09.1994 का दस्तावेज संपार्श्विक उद्देश्य के लिए साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य हो सकता है, बशर्ते अपीलकर्ता दस्तावेज को जब्त कर ले और जुर्माने के साथ स्टाम्प ड्यूटी का भुगतान करे। [पैरा 13 और 15] [510-ई-एफ; 511-ई]

काले और अन्य बनाम समेकन और अन्य के उप निदेशक

(1976) 3 एससीसी 119; येल्लापु उमा माहेश्वरी

और एक अन्य वी. बुद्धा जगदीश्वरराव और अन्य

(2015) 16 एससीसी 787 पर भरोसा किया गया।

केस लॉ रेफरेंस

(1976) 3 एससीसी 119 पैरा 11 (2015) 16 एससीसी 787 पैरा 13 सिविल अपीलीय अधिकार क्षेत्र पर आधारित है:

सिविल अपील संख्या 3171 की 2018

एसबी सिविल रिट याचिका संख्या 4810/2015 में राजस्थान उच्च न्यायालय, जोधपुर के आदेश एवं दिनांक 23.01.2017

अजीत कुमार सिन्हा, वरिष्ठ अधिवक्ता, यूनुस मलिक, अनीश माहेश्वरी, ज़ैन ए खान, समीर मलिक, अपीलकर्ता के वकील।

प्रतिवादी के लिए एच. डी. थानवी, सुश्री प्रीति थानवी, ऋषि मतोलिया, एडवोकेट।

न्यायालय का निर्णय

अशोक भूषण, न्यायमूर्ति 1. अपीलकर्ता, जो 2011 के सिविल सूट नंबर 4 में वादी था, ने जोधपुर में राजस्थान उच्च न्यायालय के 23.01.2017 के फैसले पर सवाल उठाते हुए यह अपील दायर की है, जिसके द्वारा अतिरिक्त जिला न्यायाधीश के 03.03.2015 के आदेश के खिलाफ अपीलकर्ता द्वारा दायर रिट याचिका को खारिज कर दिया गया है।

2. इस अपील पर निर्णय लेने के लिए मामले के संक्षिप्त तथ्यों पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है: सुप्रीम कोर्ट की रिपोर्ट [2018] 10 एस.सी.आर.

हम पार्टियों को वाद पत्र में वर्णित के रूप में संदर्भित करेंगे। वादी और प्रतिवादी स्वर्गीय देवी दत्त जी वर्मा के पुत्र होने के नाते सगे भाई हैं। वादी का मामला यह है कि उसके पिता देवी दत्त वर्मा ने 25.10.1992 को अपनी स्वयं अर्जित चल और अचल संपत्तियों को वादी और प्रतिवादी के बीच विभाजित करने का फैसला किया। हालांकि, दिवंगत पिता ने किसी भी समझौते को निष्पादित नहीं किया। देवी दत्त वर्मा की मृत्यु 10.09.1993 को हुई और उसके बाद 09.09.1994 को वादी और प्रतिवादी ने अपनी स्व-अर्जित संपत्तियों के संबंध में अपने पिता द्वारा तय किए गए समझौते का ज्ञापन दर्ज किया। समझौते के ज्ञापन पर दोनों पक्षों की मां ने हस्ताक्षर किए थे और दो बहनों ने गवाह के तौर पर हस्ताक्षर किए थे। समझौता ज्ञापन के अनुसार, अगुना बाजार में आवासीय घर और दुकान दोनों को उनके दिवंगत पिता द्वारा तय किए गए अनुसार वितरित किया गया था।

3. 2010 का एक सिविल मुकदमा संख्या 5 वादी द्वारा दायर किया गया था जिसमें आवासीय घर के साथ-साथ दुकान के विभाजन के लिए प्रार्थना की गई थी। मुकदमे में प्रतिवादी रामवतार भामा द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश VII नियम 11 के तहत एक आवेदन दायर किया गया था, जिसमें दलील दी गई थी कि 25.10.1992 को वादी और प्रतिवादी के पिता श्री देवी दत्त वर्मा के जीवनकाल के दौरान घर और दुकान का विभाजन किया गया था। घर का दक्षिणी हिस्सा वादी के हिस्से में आया और उत्तरी हिस्सा प्रतिवादी के हिस्से में आया। दिनांक 25.10.1992 के पूर्व विभाजन की पुष्टि में, दिनांक 09.09.1994 को पारिवारिक समझौता निष्पादित किया गया था, जिस पर वादी और प्रतिवादी के साथ-साथ दोनों बहनों के साथ-साथ मां द्वारा भी हस्ताक्षर किए गए थे। उपरोक्त के मद्देनजर, प्रतिवादी द्वारा यह दलील दी गई थी कि वादी के लिए विभाजन मुकदमा दायर करने के लिए कार्रवाई का कोई कारण नहीं था। प्रतिवादी ने प्रार्थना की कि वादी का मुकदमा खारिज कर दिया जाए।

4. ट्रायल कोर्ट ने अपने दिनांक 19.01.2011 के आदेश के तहत प्रतिवादी द्वारा आदेश VII नियम 11 सीपीसी के तहत दायर आवेदन को स्वीकार कर लिया और वादी के पक्ष में कार्रवाई के कारण के अभाव में मुकदमा खारिज कर दिया। सिविल कोर्ट ने प्रतिवादी के मामले को स्वीकार किया कि जो पक्ष संयुक्त परिवार में थे, वे विभाजित हो गए हैं, पार्टियों के बीच कुछ भी संयुक्त नहीं है, वादी के लिए विभाजन के लिए मुकदमा दायर करने के लिए कार्रवाई का कोई कारण नहीं है। स्थायी निषेधाज्ञा के लिए राहत को विभाजन से संबंधित भी माना गया था।

5. वादी द्वारा 2011 का एक और सिविल मुकदमा संख्या 4 दायर किया गया था, जिसमें दावा किया गया था कि 19.01.2011 को वादी के पहले के मुकदमे को खारिज करने के बाद, प्रतिवादी ने घर का ताला तोड़ दिया और मकान पर कब्जा कर लिया। सीता राम भामा बनाम रामवतार भामा वादी ने प्रतिवादी के खिलाफ कब्जे के आदेश के साथ-साथ स्थायी निषेधाज्ञा के डिक्री के लिए प्रार्थना की। वादी ने लाभ और व्यय की भी मांग की।

6. मुकदमे में, वादी ने दिनांक 09.09.1994 को पारिवारिक समझौते का दस्तावेज दायर किया है, जिसे वादी द्वारा समझौता ज्ञापन के रूप में दावा किया गया था। प्रतिवादी द्वारा आदेश XIII नियम 3 सीपीसी और भारतीय स्टाम्प अधिनियम के अनुच्छेद 45 और धारा 35 और भारतीय पंजीकरण अधिनियम की धारा 17 और 49 के तहत एक आवेदन दायर किया गया था, जिसमें दावा किया गया था कि दिनांक 09.09.1994 का दस्तावेज एक पंजीकृत दस्तावेज नहीं है और ठीक से मुद्रित नहीं किया गया है, इसे साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं है, इसे अस्वीकार कर दिया जा सकता है। वादी द्वारा आवेदन का जवाब दिया गया था। ट्रायल कोर्ट ने अपने दिनांक 03.03.2015 के आदेश के तहत प्रतिवादी के आवेदन को यह कहते हुए स्वीकार कर लिया कि दिनांक 09.09.1994 का दस्तावेज एक पारिवारिक निपटान विलेख और एक त्याग दस्तावेज है जो साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य नहीं है, जिस पर अपर्याप्त मुहर लगी हुई है और इसे पंजीकृत नहीं किया जा रहा है। दिनांक 03.03.2015 के उक्त आदेश के खिलाफ वादी द्वारा रिट याचिका दायर की गई थी, जिसे उच्च न्यायालय ने ट्रायल कोर्ट के आदेश को बरकरार रखते हुए खारिज कर दिया था। उच्च न्यायालय ने यह भी कहा कि तथाकथित पारिवारिक समझौता बहनों और मां के हिस्से को छीन लेता है, इसलिए, इसे अनिवार्य रूप से पंजीकृत किया गया था। उक्त आदेश से व्यथित वादी इस अपील में आया है।

7. अपीलकर्ता की ओर से पेश वरिष्ठ वकील श्री अजीत कुमार सिन्हा ने कहा कि दिनांक 09.09.1994 का दस्तावेज केवल विभाजन का एक ज्ञापन है जो 25.10.1992 को हुआ था जब पार्टियों के पिता ने घर और दुकान का विभाजन किया था। पारिवारिक समझौते का ज्ञापन अनिवार्य रूप से पंजीकरण योग्य नहीं है। दस्तावेज अपने आप में पारिवारिक समझौता नहीं है, बल्कि ट्रायल कोर्ट द्वारा केवल एक ज्ञापन को स्वीकार किया जाना चाहिए था। उन्होंने आगे कहा कि वादी द्वारा दायर पहले मुकदमे में 2010 का मुकदमा संख्या 5 है, प्रतिवादी की दलील पर आदेश VII नियम 11 सीपीसी के तहत मुकदमा खारिज कर दिया गया था कि पार्टियों के बीच विभाजन पहले ही हो चुका है जैसा कि वादी ने दावा किया है, इसलिए, विभाजन के लिए मुकदमा दायर करने के लिए कार्रवाई का कोई कारण पैदा नहीं हुआ है। उन्होंने प्रस्तुत किया कि 25.10.1992 को पार्टियों के पिता द्वारा किए गए विभाजन, जिसे बाद में 09.09.1994 को दर्ज किया गया था, को पहले ही स्वीकार कर लिया गया है, ट्रायल कोर्ट के लिए 09.09.1994 के दस्तावेज को सबूत के रूप में लेने के लिए अस्वीकार करना खुला नहीं है। यह प्रस्तुत किया गया है कि नीचे की अदालत के आदेश से वादी उपचार-रहित हो गया है। सुप्रीम कोर्ट की रिपोर्ट [2018] 10 एस.सी.आर.

8. प्रतिवादी के विद्वान वकील ने अपीलकर्ता के विद्वान वकील की दलीलों का खंडन करते हुए तर्क दिया कि ट्रायल कोर्ट के साथ-साथ उच्च न्यायालय भी इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि दिनांक 09.09.1994 का दस्तावेज अनिवार्य रूप से पंजीकरण योग्य था। इसे न तो पंजीकृत किया गया है और न ही विधिवत मुहर लगाई गई है, ट्रायल कोर्ट द्वारा इसे साक्ष्य के रूप में लेने से खारिज कर दिया गया है। उनका कहना है कि उच्च न्यायालय ने वादी द्वारा दायर रिट याचिका को सही तरीके से खारिज कर दिया है।

9. हमने पार्टियों की प्रस्तुतियों पर विचार किया है और रिकॉर्ड का अवलोकन किया है।

10. वर्तमान मामले में एकमात्र प्रश्न जिस पर विचार करने की आवश्यकता है, वह यह है कि क्या दिनांक 09.09.1994 के दस्तावेज को ट्रायल कोर्ट द्वारा साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता था या ट्रायल कोर्ट ने उक्त दस्तावेज को सही ढंग से अस्वीकार्य माना है। वादी ने 09.09.1994 के दस्तावेज को पारिवारिक समझौते के ज्ञापन के रूप में दावा किया। वादी का मामला यह है कि इससे पहले 25.10.1992 को पार्टियों के पिता के जीवनकाल में विभाजन हुआ था जिसे 09.09.1994 को पारिवारिक समझौते के ज्ञापन के रूप में दर्ज किया गया था। एक से अधिक कारण हैं जिनके कारण हमारा विचार है कि दिनांक 09.09.1994 का दस्तावेज केवल पारिवारिक समझौते का ज्ञापन नहीं था, बल्कि एक पारिवारिक समझौता था। सबसे पहले, 25.10.1992 को, पार्टियों के पिता स्वयं दोनों के मालिक थे, निवास और दुकान देवी दत्त वर्मा की स्व-अर्जित संपत्ति थी। उच्च न्यायालय ने सही कहा है कि उक्त दस्तावेज को वसीयत नहीं कहा जा सकता है, ताकि पिता अपने दो बेटों, वादी और प्रतिवादी के पक्ष में वसीयत बना सके। न तो वादी और न ही प्रतिवादी के पास उस दिन संपत्ति में कोई हिस्सा था जब कहा जाता है कि देवी दत्त वर्मा द्वारा इसका विभाजन किया गया था। देवी दत्त वर्मा का निधन 10.09.1993 को हुआ। उसकी मृत्यु के बाद, प्रतिवादी और उनकी मां के साथ-साथ बहनें हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1955 के तहत कानूनी उत्तराधिकारी बन जाती हैं, जो वर्ग 1 उत्तराधिकारी होने के नाते संपत्ति का उत्तराधिकारी बनती हैं। दिनांक 09.09.1994 के दस्तावेज ने वादी और प्रतिवादी के बीच पूरी संपत्ति को विभाजित किया, जिस दस्तावेज पर उनकी मां के साथ-साथ बहनों द्वारा भी हस्ताक्षर किए जाने का दावा किया गया है। मामले के किसी भी दृष्टिकोण में, संपत्तियों के अन्य उत्तराधिकारियों के अधिकारों का त्याग है, इसलिए, नीचे दी गई अदालतें अपने निष्कर्ष में सही हैं कि त्याग होने के कारण, दिनांक 09.09.1994 का दस्तावेज पंजीकरण अधिनियम की धारा 17 के तहत अनिवार्य रूप से पंजीकृत था

11. पारिवारिक निपटान, पारिवारिक निपटान ज्ञापन और पंजीकरण की आवश्यकता से संबंधित, कानून सीता राम भामा बनाम रामवतार भामा द्वारा स्थापित हो चुका है।

[अशोक भूषण, न्यायमूर्तिगण]

द्वारा तय किया गया है। यह अदालत काले और अन्य बनाम समेकन के उप निदेशक और अन्य, (1976) 3 एससीसी 119 में इस न्यायालय के फैसले का उल्लेख करना पर्याप्त है। पारिवारिक निपटान, इसके पंजीकरण के संबंध में प्रस्ताव इस न्यायालय द्वारा पैराग्राफ 10 और 11: "10 में निर्धारित किए गए थे।

दूसरे शब्दों में, पारिवारिक समझौते के बाध्यकारी प्रभाव और अनिवार्यताओं को ठोस रूप में रखने के लिए, मामले को निम्नलिखित प्रस्तावों के रूप में कम किया जा सकता है:

(1) पारिवारिक समझौता एक प्रामाणिक होना चाहिए ताकि परिवार के विभिन्न सदस्यों के बीच उचित और न्यायसंगत विभाजन या संपत्तियों के आवंटन द्वारा पारिवारिक विवादों और प्रतिद्वंद्वी दावों को हल किया जा सके;

(2) उक्त निपटान स्वैच्छिक होना चाहिए और धोखाधड़ी, जबरदस्ती या अनुचित प्रभाव से प्रेरित नहीं होना चाहिए;

(3) परिवार की व्यवस्था मौखिक भी हो सकती है, जिस स्थिति में कोई पंजीकरण आवश्यक नहीं है;

(4) यह अच्छी तरह से तय है कि पंजीकरण केवल तभी आवश्यक होगा जब परिवार की व्यवस्था की शर्तों को लिखित में कम कर दिया जाए। यहां भी, दस्तावेज़ के तहत किए गए पारिवारिक व्यवस्था के नियमों और अभिलेखों वाले दस्तावेज़ और परिवार की व्यवस्था के बाद तैयार किए गए केवल ज्ञापन के बीच अंतर किया जाना चाहिए या तो रिकॉर्ड के उद्देश्य से या आवश्यक उत्परिवर्तन करने के लिए अदालत की जानकारी के लिए। ऐसे मामले में ज्ञापन स्वयं अचल संपत्तियों में किसी भी अधिकार को नहीं बनाता है या समाप्त नहीं करता है और इसलिए पंजीकरण अधिनियम की धारा 17 (2) के दायरे में नहीं आता है और इसलिए, अनिवार्य रूप से पंजीकरण योग्य नहीं है;

(5) जो सदस्य पारिवारिक व्यवस्था के पक्षकार हो सकते हैं, उनके पास कुछ पूर्ववर्ती शीर्षक, दावा या हित होना चाहिए, यहां तक कि संपत्ति में एक संभावित दावा भी होना चाहिए जो निपटान के पक्षकारों द्वारा स्वीकार किया जाता है। यहां तक कि अगर समझौते के एक पक्ष के पास कोई शीर्षक नहीं है, लेकिन व्यवस्था के तहत दूसरा पक्ष ऐसे व्यक्ति के पक्ष में अपने सभी दावों या शीर्षकों को छोड़ देता है और उसे एकमात्र मालिक के रूप में स्वीकार करता है, तो सुप्रीम कोर्ट रिपोर्ट [2018] 10 एस.सी.आर.

पूर्ववर्ती शीर्षक माना जाना चाहिए और पारिवारिक व्यवस्था को बरकरार रखा जाएगा और अदालतों को इसे सहमति देने में कोई कठिनाई नहीं होगी;

(6) भले ही वास्तविक विवाद, वर्तमान या संभव, जिसमें कानूनी दावे शामिल नहीं हो सकते हैं, एक वास्तविक पारिवारिक व्यवस्था द्वारा निपटाए जाते हैं जो उचित और न्यायसंगत है, पारिवारिक व्यवस्था अंतिम है और निपटान के पक्षकारों के लिए बाध्यकारी है।

11. ऊपर उल्लिखित सिद्धांतों को इस न्यायालय के साथ-साथ प्रिवी काउंसिल और अन्य उच्च न्यायालयों के निर्णयों के लंबे समय तक स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया गया है, जिन पर हम वर्तमान में चर्चा करेंगे।

12. इस प्रकार, हम ट्रायल कोर्ट के साथ-साथ उच्च न्यायालय द्वारा लिए गए दृष्टिकोण से पूरी तरह सहमत हैं कि दिनांक 09.09.1994 का दस्तावेज अनिवार्य रूप से पंजीकरण योग्य था। दस्तावेज पर मुहर नहीं लगने के कारण इसे साक्ष्य के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता था और निचली अदालत के आदेश में आदेश XII नियम 3 सीपीसी के तहत आवेदन को अनुमति दी जा सकती थी और दस्तावेज को अस्वीकार्य मानने वाले प्रतिवादी के आवेदन को स्वीकार करने में ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए कारणों को गलत नहीं ठहराया जा सकता है।

13. इस मामले का केवल एक पहलू है जिस पर विचार करने की आवश्यकता है, अर्थात्, क्या दिनांक 09.09.1994 का दस्तावेज़, जो साक्ष्य में अस्वीकार्य था, का उपयोग किसी संपार्श्विक उद्देश्य के लिए किया जा सकता था। विभाजन के लिए एक मुकदमे में, एक अपंजीकृत दस्तावेज

को संपार्श्विक उद्देश्य के लिए भरोसा किया जा सकता है यानी शीर्षक की गंभीरता, विभिन्न शेयरों के कब्जे की प्रकृति, लेकिन प्राथमिक उद्देश्य के लिए नहीं यानी संयुक्त संपत्तियों का विभाजन और सीमा ओं द्वारा। इसके अलावा, एक बिना मुहर वाला उपकरण संपार्श्विक उद्देश्य के लिए भी साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं है, जब तक कि उसे जब्त नहीं किया जाता है। येल्लापु उमा माहेश्वरी और एक अन्य बनाम बुद्ध जगदीश्वरराव और अन्य, (2015) 16 एससीसी 787 में इस न्यायालय की दो न्यायाधीशों की पीठ का फैसला उचित है। उपर्युक्त मामले में दिनांक 05.06.1975 के दस्तावेज संख्या प्रदर्श बी-21 और दिनांक 04.06.1975 के प्रदर्श-बी-22 की स्वीकार्यता भी विचार के लिए आई, जो प्रतिवादी संख्या 1- वादी और अपीलकर्ता संख्या1-प्रतिवादी स्वर्गीय महालक्षम्मा के बीच एक समझौता था। स्वीकार्यता के संबंध में आपत्ति ली गई थी जिसे उच्च न्यायालय और ट्रायल कोर्ट दोनों ने बरकरार रखा था। इस मामले को इस न्यायालय द्वारा लिया गया था। उपरोक्त मामले में, इस न्यायालय ने माना कि दस्तावेज़ को दिया गया नामकरण निर्णायक कारक नहीं है, बल्कि प्रकृति और सार

[अशोक भूषण, न्यायमूर्ति]

लेन-देन की राशि दस्तावेजों की शर्तों के संदर्भ में निर्धारित की जानी चाहिए। इस अदालत ने दोनों दस्तावेजों पर विचार करने के बाद प्रदर्श बी -21 और प्रदर्श बी -22 ने कहा कि उन्हें पंजीकरण की आवश्यकता है। पैराग्राफ 15 में निम्नलिखित कहा गया था

15. यह अच्छी तरह से तय है कि दस्तावेज़ को दिया गया नामकरण निर्णायक कारक नहीं है, लेकिन लेनदेन की प्रकृति और सार को दस्तावेजों की शर्तों के संदर्भ में निर्धारित किया जाना चाहिए और यह कि दस्तावेज़ की स्वीकार्यता पूरी तरह से उस दस्तावेज़ में निहित अभिलेखों पर निर्भर करती है, न कि उस पार्टी द्वारा निर्धारित दलीलों के आधार पर। प्रश्न में दस्तावेज़ का परिचय दें। दोनों एक्सट्स का पूरी तरह से पढ़ना। प्रदर्श बी -21 और प्रदर्श बी -22 यह बहुत स्पष्ट करता है कि एक दस्तावेज के माध्यम से अचल संपत्ति के संबंध में अधिकार का त्याग है जो अनिवार्य रूप से पंजीकरण योग्य दस्तावेज है और यदि इसे पंजीकृत नहीं किया जाता है, तो यह पंजीकरण अधिनियम की धारा 49 के तहत परिकल्पित एक अस्वीकार्य दस्तावेज बन जाता है। प्रदर्श बी -21 और प्रदर्श बी -22 ऐसे दस्तावेज हैं जो पंजीकरण अधिनियम की धारा 17 (1) (बी) के दायरे में आते हैं और इसलिए अनिवार्य रूप से पंजीकरण योग्य दस्तावेज हैं और पार्टियों के बीच विभाजन के तथ्य को साबित करने के उद्देश्य से साक्ष्य में अस्वीकार्य हैं। हमारी सुविचारित राय है कि एक्सट्स। विभाजन के प्राथमिक उद्देश्य को साबित करने के उद्देश्य से प्रदर्श बी -21 और प्रदर्श बी -22 साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं हैं।

14. उक्त दस्तावेजों को अमान्य मानने के बाद, इस न्यायालय ने आगे इस प्रश्न पर विचार किया कि क्या दस्तावेजों प्रदर्श बी -21 और प्रदर्श बी -22 का उपयोग किसी भी संपार्श्विक उद्देश्य के लिए किया जा सकता है। उपरोक्त संदर्भ में न्यायालय ने अपीलकर्ता की इस दलील को स्वीकार कर लिया कि दस्तावेजों को संपार्श्विक उद्देश्य के लिए देखा जा सकता है, बशर्ते अपीलकर्ता-प्रतिवादी को जुर्माने के साथ स्टाम्प ड्यूटी का भुगतान करना पड़े और दस्तावेज को जब्त करना पड़े। पैराग्राफ 16 और 17 में निम्नलिखित निर्धारित किया गया है:

"16 फिर अगला प्रश्न जो विचार के लिए आता है

वह यह है कि क्या इनका उपयोग किसी संपार्श्विक उद्देश्य के लिए किया जा सकता है।

आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय की वृहद पीठ ने

चिन्नप्पारेड्डीगरी पेडा मुट्याला रेड्डी बनाम उच्चतम न्यायालय की रिपोर्ट [2018] 10 एस.सी.आर. चिन्नाप्पारेड्डीगरी वेंकट रेड्डी (एआईआर 1969, एपी 242) में कहा है कि विभाजन की पूरी प्रक्रिया में तीन चरणों पर विचार किया गया है, अर्थात स्थिति की पृथकता, संयुक्त संपत्ति का विभाजन और सीमाओं द्वारा विभाजन 3 और विभिन्न शेयरों के कब्जे की प्रकृति। विभाजन के लिए एक मुकदमे में, एक अपंजीकृत दस्तावेज को संपार्श्विक उद्देश्य के लिए भरोसा किया जा सकता है यानी शीर्षक की गंभीरता, विभिन्न शेयरों के कब्जे की प्रकृति, लेकिन प्राथमिक उद्देश्य के लिए नहीं यानी संयुक्त संपत्तियों का विभाजन और सीमा ओं के आधार पर। जब तक उसे जब्त नहीं किया जाता है, तब तक संपार्श्विक उद्देश्य के लिए भी बिना मुहर वाला उपकरण साक्ष्य में स्वीकार्य नहीं है। इसलिए, यदि अपीलकर्ता- प्रतिवादी इन दस्तावेजों को संपार्श्विक उद्देश्य के लिए चिह्नित करना चाहते हैं, तो उनके लिए जुर्माना के साथ स्टाम्प ड्यूटी का भुगतान करना और दस्तावेज को जब्त करना खुला है और ट्रायल कोर्ट एक्सट्स को चिह्नित करने के लिए स्वतंत्र है। बी -21 और बी -22 संपार्श्विक उद्देश्य के लिए प्रमाण और प्रासंगिकता के अधीन हैं।

17. तदनुसार, सिविल अपील को आंशिक रूप से अनुमति दी जाती है। प्रदर्श बी-21 और प्रदर्श बी-22 संपार्श्विक उद्देश्य के लिए साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य हैं, जो स्टाम्प ड्यूटी, जुर्माना, प्रमाण और प्रासंगिकता के भुगतान के अधीन हैं।

15. उपरोक्त मामले में इस न्यायालय द्वारा निम्नलिखित विधि प्रतिपादित की जाती है, हमारे अभिमत में दिनांक 09.09.1994 का दस्तावेज संपार्श्विक उद्देश्य के लिए साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य हो सकता है बशर्ते अपीलकर्ता दस्तावेज को जब्त कर ले और जुर्माने के साथ स्टाम्प ड्यूटी का भुगतान करे जैसा कि उपरोक्त मामले में निर्देशित किया गया है।

16. परिणाम में, इस अपील को आंशिक रूप से निम्नलिखित तरीके से अनुमति दी जाती है:

विचारण न्यायालय के साथ-साथ उच्च न्यायालय के आदेश को यह मानते हुए कि दिनांक 09.09.1994 को अनिवार्य पंजीकरण की आवश्यकता वाले दस्तावेज को पुष्ट किया जाता है। येल्लापु उमा माहेश्वरी (सुप्रा) मामले में इस न्यायालय के पूर्वोक्त दृष्टिकोण के बाद, इस अपील को आंशिक रूप से अनुमति दी जाती है कि दिनांक 09.09.1994 का विलेख स्टाम्प ड्यूटी और जुर्माने के भुगतान के अधीन संपार्श्विक उद्देश्य के लिए साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य है।

अपील आंशिक रूप से स्वीकृत

Digitally signed by VIMLESH SAROJ
Date: 2023.10.27 16:04:50 IST
Reason: Document Owner
Location: District and Sessions Court